International Research Journal of Human Resource and Social Sciences
ISSN(O): (2349-4085) ISSN(P): (2394-4218)
Impact Factor 5.414 Volume 7, Issue 06, June 2020
Website- www.aarf.asia, Email : editoraarf@gmail.com

उच्च शिक्षा में निजीकरण बनाम व्यवसायीकरण

डॉ0 ललित कुमार आर्य
पूर्व सीनियर एकेडमिक फैलो, आईसीएचआर, नई दिल्ली
प्रो0 जे0एस0 भारद्वाज
पूर्व विभागाध्यक्ष एवं संकायाध्यक्ष, शिक्षा विभाग, चौ0 चरण सिंह विश्वविद्यालय, मेरठ

सारांश–

प्रस्तुत अध्ययन उच्च शिक्षा में निजीकरण बनाम व्यवसायीकरण को इंगित करता है। वर्तमान समाज में शिक्षा व्यवस्था और दर्शन एवं संक्रान्ति के दौर से गुजर रही है। परम्परागत शैक्षणिक सिद्धान्त भावना मूल आधार विस्मृत कर रहे हैं। नव उन्मेष शैक्षिक आयामों का निरन्तर समावेश हो रहा है जिसके कारण एक ओर सकारात्मक सुधार के प्रयत्न हुए हैं। शैक्षणिक परिवेश के मूल आधार शिक्षा–शिक्षक और शिक्षार्थी होते हैं। स्व–वित्तपोषित योजना के अन्तर्गत इन तीनों इकाईयों को सम्बृद्धि एवं मानक के अनुरूप रखने का उत्तरदायित्व हमारे शैक्षिक विद्वान के महारथियों का होता है। प्रायः देखा जाता है कि अध्यापक पूर्णरूपेण शैक्षणिक मानकों पर नहीं उतरते इसके लिए भी उत्तरदायित्व हमारी शैक्षणिक प्रसार प्रशासन की व्यवस्था ही है। अतः कहा जा सकता है कि गुणवत्ता की क्रमिक गिरावट के पीछे इन कारकों की संचयी प्रवृत्ति जिम्मेदार है।

वर्तमान व्यवस्था में शिक्षा का पूर्णतः बाजारीकरण हो रहा है। इसको दृष्टिकोण में रखते हुए निरन्तर शिक्षण संस्थाएँ अस्तित्व में आ रही है। स्व–वित्तपोषित महाविद्यालय के प्रबन्धकों का मुख्य उद्देश्य धन संग्रह होता है। वे मानक पूरा करने के लिए सुयोग्य प्राध्यापकों को विश्वविद्यालय प्रशासन से अनुमोदन करा लेते हैं। परन्तु उन्हें उचित वेतन नहीं दे पाते हैं, फलतः अयोग्य अध्यापकों को भरभार हो जाती है। इससे शिक्षा का गुणात्मकस्वरूप समाप्त होने लगता है, शिक्षा के लिए अनिवार्य आधारभूत स्थापनाओं एवं अनिवार्यताओं को भी पूर्ण नहीं कर पाते जिसके कारण निरन्तर समस्याएँ उत्पन्न होती हैं। यदि हम इस व्यवस्था का तार्किक विश्लेषण करते हैं जिसका एक पक्ष लोकतान्त्रिक प्रणाली के रूप में सभी शिक्षा चाहने वाले अवसर प्रदान करने की सुविधा एवं अवसर प्राप्त होता है। परन्तु साथ ही शैक्षणिक मूल्यों की अवेहलना के फलस्वरूप शैक्षणिक परिवेश में अवनति एवं नकारात्मक प्रवृत्तियाँ देखी जाती हैं। एक शैक्षणिक अनुसन्धान के निष्कर्ष से यह है कि स्व–वित्तपोषित शैक्षणिक परिवेश शिक्षा के क्षेत्र में एक अत्यन्त व्यापक पहल होते हुए विभिन्न विंसंगतियों एवं अन्तरविरोध को उत्पन्न करता है।

शिक्षा ज्ञान का वह अमूल्य अस्त्र है, जो अभिव्यक्ति का सशक्त माध्यम है, जिससे सभ्यताएँ बनती हैं और संस्कृतियाँ परवान चढ़ती हैं। शिक्षा के द्वारा ही समुदाय, समाज व राष्ट्र शक्ति–सम्पन्न तथा लोकतन्त्र मजबूत होता है।

देश के विकास एवं उन्नति में उच्च शिक्षा की महत्वपूर्ण भूमिका है। उच्च शिक्षा राष्ट्रीय निवेश के रूप में सर्वोच्च धरोहर है और यह मानव पूँजी के निर्माण में भी मार्ग निर्देशित करती है। आज भूमंडलीकरण एवं उदारीकरण के युग में मानव–जीवन के हर क्षेत्र में निजीकरण का विस्तार हो रहा है। निजीकरण के कारण आज उच्च शिक्षा जगत में एक नवीन उच्च शिक्षित समुदाय अस्तित्व में आया है जो ज्ञान–विज्ञान के क्षेत्र में देश को विशेष रूप से प्रतिष्ठित कर रहा है। उच्च शिक्षा की पर्याप्त व्यवस्था हेतु ''वित्त–व्यवस्था'' एक महत्वपूर्ण विषय है, जो उच्च

© Association of Academic Researchers and Faculties (AARF)
A Monthly Double-Blind Peer Reviewed Refereed Open Access International e-Journal - Included in the International Serial Directories.

शिक्षा में अवरोधक का कार्य करती है। लेकिन कुछ वर्षो से स्व–वित्तपोषित योजना के अन्तर्गत उच्च शिक्षा के प्रबन्धन हेतु वित्त की व्यवस्थाएँ उद्घाटित हो रही हैं। आज हर देश में उच्च शिक्षा अधिकतम रूप में निजी क्षेत्र पर निर्भर होती जा रही हैं। एक ओर निजीकरण से उच्च शिक्षा संस्थानों का संगठित विकास हो रहा है, उच्च शिक्षा की गुणवत्ता एवं सुलभता बढ़ रही है दूसरी ओर अनेक विचारक इसके नकारात्मक परिणाम आने की सम्भावना प्रकट कर रहे हैं।

वर्तमान समाज में शिक्षा व्यवस्था और दर्शन एवं संक्रान्ति के दौर से गुजर रही है। परम्परागत शैक्षणिक सिद्धान्त भावना मूल आधार विस्मृत कर रहे हैं। नव उन्मेष शैक्षिक आयामों का निरन्तर समावेश हो रहा है जिसके कारण एक ओर सकारात्मक सुधार के प्रयत्न हुए हैं। इसी की प्रेक्ष्य में जब हम स्व–वित्तपोषित शैक्षणिक परिवेश पर चिन्तन करते हैं तो शिक्षा के प्रसार–प्रचार एवं बहुसंख्यक शिक्षा अवसरों को दृष्टिगत रखते हुए स्व–वित्तपोषित संस्थाएँ जहाँ इस समस्या का निराकरण कर रही है, वहीं पर गुणात्मक अवमूल्यन की परिस्थितियाँ सामने आ रही हैं। शैक्षणिक परिवेश के मूल आधार शिक्षा–शिक्षक और शिक्षार्थी होते हैं। स्व–वित्तपोषित योजना के अन्तर्गत इन तीनों इकाईयों को सम्बृद्धि एवं मानक के अनुरूप रखने का उत्तरदायित्व हमारे शैक्षिक विद्वान के महारथियों का होता है। प्रायः देखा जाता है कि अध्यापक पूर्णरूपेण शैक्षणिक मानकों पर नहीं उतरते इसके लिए भी उत्तरदायित्व हमारी शैक्षणिक प्रसार प्रशासन की व्यवस्था ही है।

भूमंडलीकरण और नई सूचना प्रौद्योगिकी के सन्दर्भ में आज विश्व के सभी विकसित तथा विकासशील राष्ट्र सामाजिक, आर्थिक, राजनीतिक तथा तकनीकी दृष्टियों से घनिष्ठ रूप से जुड़े हुए हैं। वैश्वीकरण के कारण विभिन्न राष्ट्रो में होने वाले अनुसंधानों, आविष्कारों तथा नई–नई खोजों से हम परिचित होते जा रहे हैं, ऐसी स्थिति में उदारीकरण तथा भूमंडलीकरण का भारतीय उच्च शिक्षा व्यवस्था पर प्रभाव पड़ना स्वाभाविक है। आज पूरे विश्व में उदारीकरण भूंमडलीकरण और मुक्त बाजार की संकल्पना विकास की धुरी बनी हुई है। यही कारण है कि उदारीकरण और खुलेपन के इस दौर का प्रभाव समाज के हर क्षेत्र में दिखाई पड़ रहा है। बाजार आधिारित इस अर्थव्यवस्था का प्रभाव न केवल व्यापारिक संस्थाओं पर पड़ रहा है बल्कि गैर–व्यापारिक संस्थाओं पर भी पड़ रहा है और उच्च शिक्षा उसमें से एक है। आजद देश के उच्च शिक्षा संस्थान खुली बाजार व्यवस्था के बीच खड़े हैं, जहाँ उन्हें अनेक चुनौतियों का सामना करना पड़ रहा है।

प्राचीन काल में उच्च शिक्षण संस्थान स्वाभाविक रूप से आकर्षण के केन्द्र हुआ करते थे। उनकी डिग्री की उपयोगिता और गुणवत्ता विशेष महत्व रखती थी परन्तु आज उनकी डिग्रियों की उपयोगिता परखी जा रही है और उनके रोजगार दिलाने की क्षमता की परख की जा रही है। स्पष्ट है कि अब इन उच्च शिक्षा केन्द्रों की शिक्षा और उनके द्वारा प्रदत्त डिग्री की गुणवत्ता संकटापन्न है।

निजीकरण एवं व्यवसायीकरण की आवश्यकता

बढ़ती हुई जनसंख्या एवं सभी को उच्च शिक्षा मुहैया कराने की आवश्यकता ने उच्च शिक्षा में वित्त की समस्या को खड़ा कर दिया है। एक अनुमान के अनुसार कुल घरेलू उत्पाद का 8 प्रतिशत ही उच्च शिक्षा पर व्यय हो रहा है। नवी पंचवर्षीय योजना में उच्च शिक्षा पर 2500 करोड़ रूपए व्यय किया गया तो वर्तमान आवश्यकताओं को देखते हुए बहुत कम है। शिक्षा के भावी वित्त पर यदि दृष्टिगत करे तो बिरला अम्बानी रिपोर्ट 2002 यह बताती है कि 2015 में उच्च शिक्षा उपलब्ध कराने हेतु अनुमानतः 41,939 करोड़ रू0 खर्च करने होगें।

अतः कई समितियों ने उच्च शिक्षा के लिए किए जाने वाले सरकारी व्यय को कम किए जाने की सिफारिश की जिसमें डॉ0 राधाकृष्णन की अध्यक्षता वाले विश्वविद्यालय शिक्षा आयोग ने अपनी रिपोर्ट में स्पष्ट रूप से इंगित किया है कि विश्वविद्यालय को केवल राजनीति तथा प्रशासन के क्षेत्र में ही नेता तैयार नहीं करने चाहिए बल्कि विभिन्न व्यवसायों उद्योगों तथा समुदायों में भी नेता तथा विशेषज्ञ तैयान करने चाहिए।

विश्व बैंक रिपोर्ट ने भी उच्च शिक्षा के लिए किए जाने वाले सरकारी व्यय को कम किए जाने व विश्वविद्यालय को आन्तरिक संसाधन जुटाने के साथ–साथ निजी क्षेत्र के लिए उच्च शिक्षा के दरवाजे खोल दिए जाने की सिफारिश की है। इसके साथ ही विश्वविद्यालय की फीसों

का भार उठाने के लिए विद्यार्थियों को ऋण तथा छात्रवृत्तियाँ देने का प्रावधान करने और एक ऋण वसूली एजेंसी स्थापित करने का भी सुझाव दिया है। तत्पश्चात् **अम्बानी बिड़ना समिति** की सिफारिशों पर सरकार ने व्यवहारिक रूप में इस पर अमल करना शुरू कर दिया और विश्वविद्यालयों को आन्तरिक संसाधन जुटाने को कहा गया तथा निजी क्षेत्र के लिए उच्च शिक्षा के दरवाजे भी खोल दिए गए। केन्द्र व राज्य सरकार ने भी विश्वविद्यालय व डिग्री कॉलेजों के वित्तीय, प्रबन्धन एवं परिचालन में असमर्थता प्रकट करते हुए इसे निजी क्षेत्र को सौंप दिया है, निजी क्षेत्र में उच्च शिक्षा के अनेक संस्थान आए दिन खुल रहे हैं।

उच्च शिक्षा में निजीकरण की आवश्यकता दो कारणों से है–

1. शिक्षा की आवश्यकता अनुसार पूर्ति में सरकार की असमर्थता।
2. गुणवत्ता पूर्ण शिक्षा प्रदान करने में सरकारी संस्थाओं का सक्रिय न होना।

आधुनिक काल के प्रारम्भ अर्थात् 20वीं शताब्दी के मध्य से भारतीय शिक्षा के क्षेत्र में काफी परिवर्तन आए हैं। इसमें क्रमशः व्यवसायिकता में वृद्धि होती चली गई है। निजीकरण में उच्च शिक्षा के अनेक संस्थान आए दिन खुल रहे हैं। इस प्रकार शिक्षा में निजीकरण का दौर पूरी तरह प्रारम्भ हो गया है और विशेष रूप से चिकित्सा, इंजीनियरिंग, सूचना प्रौद्योगिकी, कम्प्यूटर, प्रबन्धन जैसे कई क्षेत्रों में बड़ी तेजी से निजी संस्थान खोले जा रहे हैं। कुकुरमुत्ते की तरह से उग रहे इन संस्थानों में उच्च शिक्षा का स्तर बना रहे यह सन्देहास्पद ही है।

इसका ताजा उदाहरण है कि फरवरी 2005 में सर्वोच्च न्यायालय ने छत्तीसगढ़ के 100 से अधिक निजी वि0वि0 की मानक के अभाव में मान्यता रद्द कर दी है। इसी प्रकार अन्य राज्यों में भी दो टीन शेड के नीचे उच्च शिक्षा का प्रदान करने वाली संस्थाएँ बिना मानकों को पूरा किए धडल्ले से पैसा ऐंठ रही है। बड़ी संख्या में उच्च शिक्षा प्रदान करने हेतु निजी वि0वि0 मेडिकल, इंजीनियरिंग, एमबीए, एमसीए, बी0एड0, एम0एड0, डी0एड0 आदि के कॉलेज पर छोटे–बड़े शहरों में खुल रहे हैं। ये संस्थाएँ स्व–वित्तपोषित कहलाती है। उच्च शिक्षा के विकास के लिए अनुदान अपर्याप्त होने के कारण कॉलेज एवम् विश्वविद्यालय को मजबूरन फीस बढ़ानी पड़ रही है। एक ओर उन पर बढ़ती हुई विद्यार्थियों की संख्या का बोझ है तो दूसरी और शिक्षा की गुणवत्ता भी दूर होती जा रही है।

शिक्षा में निजीकरण का महत्व

शिक्षा में निजीकरण से उच्च शिक्षा का सार्वभौमिकरण होगा। जिससे ज्यादा से ज्यादा युवाओं को उच्च शिक्षा प्रदान कर विकसित ज्ञान–विज्ञान से युक्त एक बौद्धिक वर्ग का उदय होगा। स्वस्थ प्रतिस्पर्धा के कारण गुणवत्ता में उन्नयन होगा, साथ ही साथ अनावश्यक राजनीतिक हस्तक्षेप से मुक्ति एवं प्रक्रियात्मक विलम्ब से छुटकारा मिलेगा तथा निर्णय में शीघ्रता व जवाब देही सुनिश्चित की जा सकेगी।

वर्तमान परिदृश्य में सार्थकता

भारत जैसे देश में जहाँ सामाजिक आर्थिक विषमता है, जहाँ कुल जनसंख्या का 40 प्रतिशत अपनी जीविकोपार्जन हेतु संघर्ष कर रहा है वहाँ महंगी फीस देकर शिक्षा प्राप्त करना दुःसाध्य कार्य है। निजी संस्थानों में शिक्षा प्राप्त करने वाले छात्रों का वार्षिक खर्च लाखों रूपए होता है, जिसका कारण निम्न तथा माध्यम वर्ग से जुड़े मेधावी छात्र धनाभाव में इनमें प्रवेश पाने से वंचित रह जाते हैं। जबकि धनी वर्ग के बेटे धन के बल पर बिना प्रवेश परीक्षा दिए एन0आर0आई0 (छण्त्ण्प्) अथवा मैनेजमेंट कोटे में वान्छित पाठ्यक्रम में आसानी से प्रवेश ले लेते हैं। अतः इन संस्थाओं में प्रवेश लेने वाले छात्र निम्न स्तर के होते हैं, तब इनसे निकलने वाले छात्रों में हम गुणवत्ता की आशा कैसे कर सकते हैं।

आगे उन बिन्दुओं की चर्चा की जा रही है जिनके कारण गुणवत्ता में क्रमशः गिरावट देखने को गिरावट देखने को मिल रही है।

- भौतिक सुविधाओं यथा–भवन, फर्नीचर, विद्युत व्यवस्था तथा खेल के मैदान का अभाव।
- योग्य एवं प्रशिक्षित अध्यापकों का अभाव।
- पेशे के प्रति समर्पण का अभाव।
- उचित प्रवेश प्रक्रिया का अभाव।
- बढ़ता अध्यापक छात्र अनुपात।
- अभिभावकों में चेतना का अभाव।
- छात्रों की विभिन्न श्रेणियाँ एवं उनकी अधिगम सम्बन्धी समस्याएँ।
- पुस्तकालयों में स्तरीय पुस्तकों का अभाव।
- वैज्ञानिक प्रयोगशालाओं में उपकरणों की कमी।
- पुराना पाठ्यक्रम जारी रखना।
- पाठ्यक्रम में एकरूपता का अभाव।
- प्रबन्ध तन्त्र का अनुचित हस्तक्षेप।
- परीक्षा व्यवस्था की कमियाँ।
- उत्तर पुस्तिकाओं के मूल्यांकन का गिरता स्तर।
- अत्यन्त सीमित समय में परीक्षा परिणामों की घोषणा का दबाव।

उपरोक्त बिन्दुओं का यदि सम्यक् विश्लेषण किया जाए तो पता चलता है कि ये सभी कारण किसी–न–किसी रूप में गुणवत्ता को प्रभावित करते हैं। यद्यपि ऐसा नही है कि प्रत्येक शैक्षिक संस्थान में ये सभी कारक एक साथ काम करते हैं। कहीं पर योग्य अध्यापक है तो वहाँ संसाधनों जैसे पुस्तकालय, प्रयोगशाला आदि तथा अच्छे शैक्षिक परिवेश का अभाव है और कहीं इनकी उपलब्धता है तो किसी दूसरे कारक को मौजूद होने के कारण गुणवत्ता प्रभावित हो रही है।

अतः कहा जा सकता है कि गुणवत्ता की क्रमिक गिरावट के पीछे इन कारकों की संचयी प्रवृत्ति जिम्मेदार है।

सुझाव

- निजीकरण को लोकतन्त्रीकरण से सम्बद्ध किया जाए अन्यथा निजीकरण उच्च शिक्षा को समाज के एक विशिष्ट वर्ग तक सीमित कर देगा।
- सरकार की उच्च शिक्षा सम्बन्धी नीति इतनी स्पष्ट हो कि निजीकरण के बावजूद उच्च शिक्षा संस्थानों एवं विश्वविद्यालय में शिक्षा के स्तर एवं गुणवत्ता का संवर्धन हो, साथ ही खुली प्रतियोगिता बाजार पद्धति में उच्च शिक्षा के संस्थान स्वस्थ प्रतियोगिता में भी शामिल हो सके।
- निजी संस्थानों से योग्य शिक्षकों की नियुक्ति सुनिश्चित किए जाने के लिए इनके चयन की केन्द्रीयकृत व्यवस्था किसी आयोग का गठन करके उसके माध्यम से की जानी चाहिए।

- प्रवेश सम्बन्धी मानकों में कठोरता व फीस संरचना को और अधिक तर्कसंगत बनाया जाए।
- उच्च शिक्षा के प्रभावी निजीकरण के लिए निजी क्षेत्र में उच्च शिक्षा केवल ख्याति प्राप्त संस्थानों के हवाले हो जिससे कि उनमें व्यवसायिक तौर पर कमाई का साधन बनने की प्रवृत्ति न पनपे।
- गरीब, योग्य और मेधावी छात्रों का इन संस्थानों ने शुल्क आदि में छूट का प्रावधान होना चाहिए।
- योग्य एवं उच्च अनुभव वाले अध्यापकों की नियुक्ति।
- उपयुक्त शिक्षक छात्र अनुपात।
- प्रवेश प्रक्रिया को पारदर्शी एवं उचित बनाना।
- निश्चित शिक्षण दिवसों का निर्धारण और उनका कड़ाई से पालन।
- एक समान पाठ्यचर्या का लागू किया जाना।
- पूरे पाठ्यक्रम शिक्षण के बाद परीक्षा कराना।
- अभिभावकों की छात्रों के प्रति जिम्मेदारी।
- केवल धन के आधार पर अयोग्य छात्रों के प्रवेश पर प्रतिबन्ध।
- पुस्तकालय तथा प्रयोगशाला की समुचित व्यवस्था।
- पाठ्य सहगामी क्रियाओं को शामिल करना।
- शैक्षिक भ्रमण आदि का प्रबन्ध करना।
- सेमिनार कार्यशाला पुस्तक प्रदर्शनी, विज्ञान प्रदर्शनी आदि का आयोजन करना।
- किसान, मजदूर, गरीब वर्गों के मेधावी छात्र छात्राओं को उच्च शिक्षा हेतु आर्थिक सहयोग प्रदान करना।

अतः संक्षेप में कहा जा सकता है कि उच्च शिक्षा में निजीकरण के संदर्भ में रूपया एवं रूतबा रूल (नियम) को प्रभावित कर रहा है। इसलिए अन्त में यह कहना उचित होगा कि कि स्व–वित्तपोषित योजना भारत जैसे विकासशील देश जिसकी आर्थिक समस्याएँ शैक्षणिक मूल्यों की पतन के कारण वाक्षित परिणाम नहीं जैसा की पहले कहा गया है कि शिक्षा–शिक्षक एवं तीन बिन्दुओं पर समस्याएँ उत्पन्न होती हैं। शिक्षा का स्तर गिर रहा है, प्राध्यापकों का शोषण होता है तथा एक बाजारवाद से उत्पन्न उपभोक्तावादी शैक्षणिक संस्कृति का प्रादुर्भाव हो रहा है जो कि हमारे शैक्षिक मूल्यों के लिए घातक है।

सन्दर्भ–

1. सिंह, मया शंकर (2007): अध्यापक शिक्षा असमंजस में।
2. त्नीमसंए`ण्च्ण ;2006द्ध रू म्कनबंजपवदंस पद म्उमतहपदह प्दकपंद`वबपमजलण
3. नीपा, (1995), अंक 1 परिप्रेक्ष्य–शैक्षिक योजना और प्रशासन का सामाजिक–आर्थिक सन्दर्भ।
4. शुक्ला, सुरेशचन्द्र, स्मारिका, उच्च शिक्षा की गुणवत्ता में अवरोधक तत्व, मार्च, 2005
5. प्रसाद, कमल किशोर, उच्च शिक्षा का वाणिज्यीकरण, प्रतियोगिता दर्पण, जुलाई, 2001, पृ0सं0 2258
6. मुकर्जी, रवीन्द्रनाथ, सामाजिक विचारधारा, विवेक प्रकाश, जवाहरनगर, दिल्ली–7, पृ0सं0–525
7. अम्बानी बिड़ला रिपोर्ट, 2000
8. एम0एम0, अन्सारी, शिक्षा का व्यवसायीकरण, अंक–1, पृ0सं0–309
9. आजाद, जे0एल0, शैक्षिक वित्त, अंक–1, पृ0सं0–558